आखिर संवाद शुरू कैसे हो ?

पर्यावरण की कक्षा के कुछ अनुभव

महमूद खान

महमूद खान का यह लेख कक्षा में संवाद की महत्ता के बारे में है। अपनी पर्यावरण की कक्षा का अनुभव साझा करते हुए वे बताते हैं कि कक्षा में संवाद बच्चों को सीखने में किस तरह मददगार होता है। लेख सुकरात को उद्धृत करते हुए संक्षेप में यह बताता है कि संवाद क्या है, इसकी प्रक्रिया कैसी हो, प्रश्न कैसे हों, किन पर विमर्श हो, किन पर नहीं, शिक्षक की क्या तैयारी हो, शिक्षक की क्या भूमिका हो और बच्चों की इसमें क्या जगह हो। सं.

मैं पिछले छह-सात वर्षों से राजस्थान के सरकारी (प्राथमिक एवं उच्च प्राथमिक) विद्यालयों में शिक्षकों एवं बच्चों के साथ पर्यावरण अध्ययन विषय पर काम करता रहा हूँ। इन विद्यालयों में पढ़ने वाले अधिकतर बच्चे गरीब एवं भवन निर्माण के काम से जुड़े मज़दूरों के हैं।

शिक्षकों एवं बच्चों के बीच आमतौर पर कक्षा-कक्ष में संवाद बहुत कम होता है। एनसीएफ 2005 कहता है कि सीखने के लिए बच्चे का समुदाय और स्थानीय वातावरण प्राथमिक सन्दर्भ होता है, जिस में ज्ञान अपना महत्व और उपयोगिता पाता है। परिवेश के साथ ही अन्तःक्रिया करके बच्चा ज्ञान का निर्माण करता है और जीवन में उस की सार्थकता पाता है। लेकिन स्कूल में पहले से स्थापित ज्ञान को ही तरज़ीह दी जाती है जिस से बच्चे की ज्ञान सृजन करने और इस प्रक्रिया के नए तरीके खोजने की क्षमता नष्ट हो जाती है। सूचना, ज्ञान सृजन से ज्यादा महत्वपूर्ण हो जाती है। सूचना को यांत्रिक रूप से दोहराने और प्रश्नों के उत्तर याद करने पर ज़ोर दिया जाता है न कि समझ को विकसित करने या समस्या सुलझाने पर।

ऐसे में बच्चे जिन अवधारणाओं के साथ स्कूल आते हैं उन से शिक्षक अपरिचित रह जाते हैं। एनसीएफ 2005 के अनुसार बच्चे अपने परिवेश की बहुत सी जानकारियों के साथ स्कूल आते हैं। यदि उन्हें यह भरोसा हो जाए कि शिक्षक उन की बात सुनना चाहता है और गलत होने पर डाँट नहीं पड़ेगी तो फिर वे खुलकर संवाद करते हैं। यह सम्भव है कि उन के पास जो जानकारी होती है वह आधी-अधूरी या गलत हो। ऐसे में एक शिक्षक की भूमिका होनी चाहिए कि वह कक्षा में बच्चों के बीच परस्पर एवं शिक्षक व बच्चों के बीच संवाद की संस्कृति बनाए। तभी वह बच्चों को प्रश्न करने, अपने मत देने, दूसरों की बात सुनने और फिर से सोचकर नया मत बनाने की दिशा में बढ़ा पाएँगे। यदि यह संवाद की संस्कृति कक्षा में बन पाती है तो बच्चों के सीखने की प्रक्रिया तेज और सही दिशा में होगी।

लेकिन यदि संवाद की यह संस्कृति किसी स्कूल में नहीं है तो वहाँ बच्चों के मन में बहुत से द्वंद्व पैदा होते हैं, मसलन वह किस बात को सही माने जिसे वह अपने परिवार, दोस्तों और आसपास से सीखते हैं या फिर शिक्षक द्वारा बताई गई बात को, जो उन के अनुभव और समाज से मिले ज्ञान से मेल नहीं खा रही है। इस लेख में मैं संवाद की संस्कृति पर कुछ विचार और अनुभव प्रस्तुत कर रहा हूँ। मोटे तौर पर मैं दो प्रश्नों पर बात करूँगा :

1. एक शिक्षक होने के नाते सरकारी स्कूलों में संवाद की संस्कृति का निर्माण कैसे

किया जाए?

2. संवाद करते हुए किन-किन बातों का ध्यान रखना चाहिए?

कक्षा-कक्ष में संवाद की संस्कृति की शुरुआत : एक उदाहरण

पिछले साल से जयपुर के शहरी ब्लॉक सांगानेर में स्थित सरकारी स्कूलों में जाना हुआ। इस दौरान कक्षा-कक्ष में जाकर बच्चों के साथ बातचीत करने और कुछ पाठों को पढ़ाने का अवसर भी मिला। इन्हीं अनुभवों में से एक अनुभव आप से साझा करना चाहता हूँ।

मुझे कक्षा 5 के बच्चों के साथ पर्यावरण अध्ययन के एक पाठ 'पानी के स्रोत कहाँ-कहाँ' पर चर्चा करनी थी।

कक्षा में जाकर बच्चों को मैंने अपना नाम बताया और उन से कहा कि आज मैं आप लोगों को 'पर्यावरण अध्ययन' विषय पढ़ाना चाहता हूँ, आप तैयार हैं? सभी बच्चे एक साथ बोले, ''यस सर।'' फिर मैंने चॉक व डस्टर माँगा। एक बच्चा दौड़कर ले आया। चर्चा की शुरुआत के लिए मैंने बोर्ड पर लिखा-'पानी'। सब बच्चों ने जोर से उच्चारण किया, 'पानी।' मैंने कहा, 'पानी को और क्या कहते हैं?' बच्चों के जवाब थे, 'जल व वॉटर।' मैंने उन्हें भी बोर्ड पर लिख दिया।

मैंने फिर से बच्चों से सवाल किया, ''हमें पानी कहाँ-कहाँ पर दिखाई देता है? एक-एक कर बताओ। मैं उस की सूची बोर्ड पर बनाता हूँ।'' बच्चों के बताए अनुसार मैंने सूची बनाई। सूची में शामिल चीज़ें थीं– कुआँ, समुद्र, नदी, तालाब, बीसलपुर, गंगा, हैण्डपम्प, हौद, गड्ढ़ा, टंकी, नल, बोर, कुण्ड, झरना, खेत में, वर्षा के दौरान सड़क पर आदि। मुझे इस सूची से पानी के वास्तविक स्रोतों तक बच्चों को लेकर जाना था। इसलिए मैंने सूची में आई चीज़ों पर एक-एक कर चर्चा करनी शुरू की।

संवाद का महत्त्व

कक्षा में संवाद करने का उद्देश्य होता है कि प्रत्येक बच्चा अपनी बात या विचार के पीछे के आधार को पहचान सके, उस आधार को दूसरे के नज़रिए से भी देखकर जाँच सके कि वह ठीक है या नहीं, दूसरे के विचार को तर्क के आधार पर खारिज़ कर सके, ताकि उस के साथी अपोरिया (Aporia तर्क में विसंगति पहचानने) की स्थिति में आकर अपने मत या विचार को नए सिरे से बनाने की तरफ बढ़ सकें। मैंने भी इस कक्षा में पर्यावरण विषय की जल थीम पर काम करते हुए बच्चों को ऐलन्कस (Elenchus, सुकरात की संवाद विधि) के माध्यम से अपोरिया की स्थिति में लाने का प्रयास किया।

मैंने बच्चों से पूछा, ''कुआँ किस-किस ने देखा है?''

बहुत से बच्चों ने कहा, ''हमने देखा है।'' मैंने फिर पूछा, ''कुआँ कैसा दिखाई देता है?'' अधिकतर बच्चों ने कहा कि कुआँ गोल और गहरा होता है। लेकिन एक लड़की बोली, ''नहीं, सर जी, कुआँ तो चौकोर होता है।''

तभी दूसरे बच्चों ने पूछा, ''चौकोर कुआँ तूने कहाँ देखा?''

लड़की बोली, ''हमारे गाँव में जहाँ से मम्मी पानी भरकर लाती हैं।''

अब बच्चे सोचने लगे। अधिकतर बोले, ''हमारे गाँव में तो ऐसा कुआँ नहीं है।''

एक लड़के ने कहा, ''तूने कुएँ में झाँककर देखा था कि वह गोल है या चौकोर?''

लड़की ने कहा, ''नहीं।''

''तो फिर तुम कैसे कह रही हो कि कुआँ चौकोर था?''

लड़की ने कहा, ''वह अपनी माँ के साथ कुएँ पर गई थी। कुएँ के मुँह पर चार पत्थर की पट्टियाँ लगी थीं और महिलाएँ चारों ओर से पानी भर रही थीं।''

वह लड़का फिर बोला कि पानी भरने की सुविधा के लिए चारों तरफ पत्थर की पट्टी लगाई जाती है लेकिन कुआँ गोल ही होता है।

बच्चों के आपसी तर्क-वितर्क को सुनकर मैंने कहा कि अधिकतर कुएँ गोल ही होते हैं। लेकिन कुछ पहाड़ी इलाकों में जहाँ चट्टान काटकर कुएँ बनाए जाते हैं वहाँ ज़रूरी नहीं होता कि कुएँ एकदम गोल ही हों। इस के बाद समुद्र पर बात की गई। बच्चों को समुद्र के आकार का कोई अन्दाज़ा नहीं था। कुछ बच्चे स्कूल के मैदान से दोगुना तो कुछ प्रताप नगर कालोनी जितना बड़ा मान रहे थे। मुझे यह परेशानी महसूस हो रही थी कि जिन बच्चों के अनुभव में समुद्र नहीं है, उन्हें उस के बारे में कैसे बताऊँ?

नदी के बारे में अधिकतर बच्चों का कहना था कि नदी आड़ी-टेढ़ी होती है और बहुत लम्बी भी होती है। थोड़ी और चर्चा से मुझे समझ आया कि वे नदी और नहर की अवधारणा में फर्क नहीं कर पा रहे थे। इस के बाद मैंने विचार बदला और तय किया कि सूची में आए शब्दों पर क्रमवार चर्चा की बजाए पहले उन के अनुभव वाले शब्दों की अवधारणाओं पर चर्चा की जाए।

परिचित सन्दर्भ और अनुभव का महत्त्व

जयपुर के पास टोंक जिले में बीसलपुर बाँध बना है। यहीं से जयपुर शहर के बड़े हिस्से के लिए पीने का पानी आता है। बच्चों के साथ चर्चा से पता चला कि अधिकतर को यह तो पता था कि बीसलपुर से पानी आता है, लेकिन बीसलपुर है क्या, यानी नदी, समुद्र, बाँध या बावड़ी यह किसी को पता नहीं था। उस के आकार के बारे में भी किसी तरह का अनुमान बच्चों के पास नहीं था। यहाँ बच्चों को बोर्ड पर एक चित्र बनाकर यह समझाने का प्रयास किया गया कि आमतौर पर नदी, तालाब, और बाँध किस तरह के दिखाई देते हैं। बाद में उन की पाठ्यपुस्तक के चित्रों की भी सहायता ली गई।

ये बच्चे अधिकतर भवन निर्माण में लगे प्रवासी मज़दूर परिवारों से थे। इन के माता-पिता आसपास बन रही ऊँची-ऊँची इमारतों में मज़दूर के रूप में काम करते हैं। बच्चों को कुण्ड, बोरवेल, हैण्डपम्प और हौद की जानकारी बहुत अच्छी तरह से थी। सब से पहले मैंने बच्चों से पूछा ''हौद क्या होती है?'' बच्चे हँसने लगे। मैंने फिर से पूछा 'हौद क्या होती है बताओ।' बच्चे बोले ''जब मकान का काम शुरू करते हैं तो सब से पहले पानी की ज़रूरत के लिए एक तीन बाय चार या पाँच का गड्ढा खोदकर उस में प्लास्टिक की सीट बिछाकर पानी भर दिया जाता है इसे ही हौद कहते हैं।'' स्कूल के हैण्डपम्प की ओर इशारा करते हुए बोले, ''सर इसे तो आप जानते ही होंगे यह हैण्डपम्प है। जो हैण्डपम्प गहरा होता है उस को देर तक चलाना पड़ता है तब पानी आता है, जबकि कम गहराई वाले से पानी जल्दी बाहर आने लगता है।'' मेरे लिए यह कम आश्चर्यजनक नहीं था कि बच्चों को यह अनुभव था कि गहरे हैण्डपम्प से पानी देर में बाहर आता है जबकि कम गहरे हैण्डपम्प से जल्दी पानी बाहर आता है। ये पूछने पर कि ऐसा क्यों होता है, कहा गया कि रास्ता कम और ज़्यादा तय करना पड़ता है इसलिए।

मैंने पूछा, ''कुण्ड क्या होता है?'' बच्चे बोले, ''सर मकान में नल के पानी को स्टोर करने के लिए एक चौकोर पक्का कुण्डा जमीन के अन्दर बनाया जाता है, बाद में उस में मोटर लगाकर पानी ऊपर की मंजिलों पर चढ़ाया जाता है।''

उन की रोज़मर्रा की ज़िन्दगी से जुड़े उन के परिचित सन्दर्भ पर बात करते हुए मैंने पूछा ''उन के परिवार को पीने का पानी कहाँ-कहाँ से मिलता है?'' जवाब मिला, कुआँ, नल, ट्यूबवेल, नदी, टंकी एवं हैण्डपम्प आदि।

मैंने अगला सवाल पूछा ''इन सब में पानी कहाँ से आता होगा?'' बच्चों ने कहा ''वर्षा से आता है।'' मैंने कहा, ''वर्षा कहाँ से आती है?'' जवाब मिला, ''ऊपर से।''

''ऊपर कहाँ से?''

''आसमान से।''

''आसमान से कैसे आती है वर्षा?''

एक बच्चे से जवाब मिला, ''सर वर्षा बादलों

से होती है।'' दो बच्चों ने कहा, ''नहीं सर वर्षा तो भगवान जी कराते हैं।'' एक बच्चे ने कहा कि शंकर भगवान की चोटी से वर्षा होती है। थोड़ी चर्चा आगे बढ़ी तो जो बच्चा कह रहा था कि वर्षा बादलों से आती है वह भी कहने लगा कि भगवान ही वर्षा करते हैं।

बच्चे बहुत आत्मविश्वास के साथ बात कर रहे थे, इसलिए मैंने कहा, ''मान लेते हैं कि वर्षा भगवान ही करते हैं। पर भगवान रहते कहाँ हैं?''

जवाब मिले पहाड़ की चोटी पर, हिमालय पर्वत पर, आसमान में, दूसरी दुनिया में आदि। लेकिन बहुमत इस बात के साथ था कि भगवान हिमालय पर्वत पर रहते हैं।

मैंने पूछा, ''तो फिर उन देशों में वर्षा कैसे करते होंगे जहाँ वे रहते ही नहीं?''

इस प्रश्न के बाद बच्चे कहने लगे कि भगवान तो हर जगह ही होता होगा।

कक्षा के एक बच्चे ने पहले कहा था कि भगवान हर जगह होता है लेकिन उस की आवाज दब गई थी, वह बच्चा एकदम उछलकर बोला, ''मैं तो पहले ही कह रहा था कि भगवान हर जगह होता है।'' यहाँ पर मैं दुविधा में फँस गया कि कक्षा 5 के बच्चों के साथ भगवान के होने या न होने पर बात की जाए या नहीं?

अब सवाल यह था कि कैसे यह बात पुष्ट की जाए कि वर्षा बादलों के माध्यम से होती है? इस चर्चा में यह बात भी हो गई कि हम सब को भी भगवान ने बनाया है और हर जीव को भी भगवान ने बनाया है।

मैंने कहा, ''भगवान देखा है किसी ने?'' एक बच्चे का जवाब आया, ''भगवान ऐसे नहीं दिखाई देता, उस से मिलने के लिए मरना पड़ता है। जो मरकर ऊपर चले जाते हैं वही उन से मिल पाते हैं। हमारे गाँव में जब भी कोई व्यक्ति मर जाता है तो लोग कहते हैं कि वह भगवान को प्यारा हो गया, यानी वह भगवान के पास चला गया।'' मैंने कहा कि फिर भगवान हर जगह कैसे रहते हैं, यदि उन के पास जाना पड़ता है? बच्चे फिर से सोच में पड़ गए। मैंने कहा, ''चलो हम भगवान की चर्चा यहाँ बन्द करते हैं।'' दरअसल मुझे अपने मुद्दे पर लौट आने के लिए यह सब करना पड़ा।

बात आगे बढ़ाते हुए मैंने कहा कि अब हम वापस यह चर्चा करते हैं कि यदि वर्षा बादलों से होती है तो ये बादल आते कहाँ से हैं या ये बनते कैसे हैं? एक बच्चे ने कहा, ''सर मुझे पता है कि बादल कैसे बनते हैं। जब घनी तेज आग लगती है तो उस का धुआँ आसमान में जाकर बादल बनाता है।'' इस में एक और बच्चे ने जोड़ा, ''हवाई जहाज के धुएँ से भी बादल बनते हैं। मैंने कई बार आसमान में हवाई जहाज को उड़ते हुए देखा है और उस के पीछे लम्बी बादल की लाइन भी बनती देखी है।'' एक लड़की ने पूछा कि यदि धुएँ से बादल बनते हैं तो उस में पानी कहाँ से आता है? अब कक्षा में एकदम सन्नाटा था। सब मेरी ओर देखने लगे। मैंने कहा, ''मुझे तो पता नहीं है चलो पुस्तक खोलते हैं और पानी वाले पाठ को देखते हैं कि उस में इस का जवाब है या नहीं।'' सभी बच्चों ने तुरंत अपनी-अपनी पुस्तक में पानी वाला पाठ खोलकर पढ़ना शुरू किया। पाठ अभी पूरा नहीं पढ़ा गया था कि स्कूल की घण्टी लग गई। मैंने कहा कि मैं दुबारा आप के स्कूल में आऊँगा तब तक आप बादल के बनने और वर्षा के होने के कारण पता लगाने का प्रयास करना।

अगली बार जब मैं उस कक्षा में गया, मैंने पूछा कि पिछली बार हम ने कहाँ तक काम किया था? बच्चों ने पाठ को याद करते हुए कहा कि बादल कैसे बनते हैं और वर्षा कैसे होती है, इस पर काम छूट गया था।

मैंने कहा, ''आज हम इस पर काम करेंगे लेकिन पहले हम यह भी जानेंगे कि नहर व नदी में क्या अन्तर होता है। उस दिन आप ये अन्तर भी नहीं बता पाए थे।''

गणेश नाम के बच्चे ने कहा कि नहर छोटी होती है और नदी बड़ी होती है।

आसिफ ने कहा कि कुछ नहरें नदियों से

बड़ी भी होती हैं।

मैंने कहा कि हाँ कुछ नदियाँ कुछ नहरों से लम्बाई में छोटी/बड़ी होती हैं।

एक दूसरे लड़के ने कहा कि नहर की बनावट एक जैसी होती है, जबकि नदी ऊबड़-खाबड़ होती है। मैंने पूछा कि नदी और नहरों में पानी कहाँ से आता है? दरअसल मैं यहाँ पर अपेक्षा कर रहा था कि बच्चे कहेंगे कि नदी में बरसात से और नहरों में बाँध से, लेकिन मेरी अपेक्षा गलत साबित हुई। बच्चों ने कहा कि वर्षा से। मैंने फिर पूछा, ''पक्की बात है?'' बच्चे सोचने लगे। लेकिन वे किसी नतीज़े पर नहीं पहुँचे।

अगला सवाल किया गया कि नदी ऊबड़-खाबड़ और नहर एक जैसी क्यों होती है? कक्षा की एक लड़की बोली कि नहर पक्की होती है और नदी कच्ची। इसलिए नदी ऊबड़-खाबड़ होती है। गणेश बोला, ''हमारे गाँव में तो नहर कच्ची है।'' आसिफ ने कहा, ''सर आप ही बता दीजिए कि नहर कच्ची होती है या पक्की।'' कुछ बच्चे इस चर्चा से बिलकुल बाहर नज़र आए। दरअसल उन्होंने न तो नदी देखी थी और न ही नहर।

मुझे लगा कि यहाँ मेरी भूमिका बनती है कि नहर व नदी के फर्क को समझा दिया जाए। मैंने बताया कि नदी प्राकृतिक होती है। भूमि के ढाल की वजह से वर्षा का पानी पहाड़ों से जब तेज गति से बहता है तो वह भूमि में कटाव करता हुआ आगे बढ़ता है, इसलिए ही नदी ऊबड़-खाबड़ होती है, जबकि नहरों का निर्माण मनुष्यों द्वारा अपनी ज़रूरत को ध्यान में रखकर किया जाता है। यह सही बात है कि कुछ नहर पक्की बनाई जाती हैं और कुछ कच्ची ही होती हैं। एक और बात जिस की तरफ बच्चों का ध्यान दिलाया गया कि नहर बाँध से निकाली जाती हैं और बाँध नदी पर बनाया जाता है। यानी नहर और नदियों का उद्‌गम स्थल अलग-अलग होता है। यहाँ पर उन की पाठ्यपुस्तक में दिए गए बीसलपुर बाँध एवं उस से निकलती नहरों के चित्र की भी मदद ली गई।

इस के बाद मैंने कहा, 'अब हम बादल और वर्षा की बात करेंगे बताओ बादल कैसे बनते हैं?' आसिफ ने कहा तेज अंधड़ से जब धूल उड़कर आसमान में चली जाती है तो बादल बनते हैं। एक दूसरे लड़के ने कहा कि धूल के कणों के साथ जब सूरज की तेज गर्मी से पानी भाप बनकर आसमान में चला जाता है तो दोनों मिलकर बादल बनाते हैं। पिंकी ने कहा कि धूल, मिट्‌टी, धुआँ आदि के कण जब भाप में मिल जाते हैं तो बादल बनते हैं। जब बादलों में अधिक पानी हो जाता है और उन का वज़न बढ़ जाता है तो वह वर्षा में बदल जाता है। इतनी चर्चा के बाद मुझे लगा कि अब फिल्म (सीक्रेट्‌स ऑफ द अर्थ : हिन्दी डॉक्यूमेंटरी) को दिखाया जाना उचित होगा क्योंकि इस फिल्म में विस्तार से बादल बनने और वर्षा होने को समझाया गया है। फिल्म देखते हुए जहाँ ज़रूरत महसूस हुई मैं बीच-बीच में समझाता रहा। बच्चों ने फिल्म को रुचि लेकर देखा।

संवाद का अर्थ, संवाद के तरीके और इसे करने की शर्तें

संवाद कोई रोज़मर्रा की गपशप नहीं है और न ही वह निरुद्‌देश बातचीत है। संवाद तो दो या दो से अधिक लोगों के बीच एक सार्थक और उद्‌देश्यपूर्ण बातचीत है। ऐसा भी नहीं है कि घण्टे दो घण्टे की बातचीत हुई और संवाद को पूरा मान लिया जाए बल्कि यह तो निरन्तर चलने वाली चिन्तन-मनन की एक प्रक्रिया है।

इस का उद्‌देश्य वाद-विवाद में किसी को हराना भी नहीं है। मेरा मत, उस का मत सही है या गलत यह ठहराना भी नहीं है। बल्कि इस पूरे चिन्तन-मनन का उद्‌देश्य तो कुछ ऐसे ज्ञान का सृजन करना है, कुछ ऐसे सत्य को प्राप्त कर लेना है जो सभी के लिए उपयोगी हो। जिस से जीवन में निर्णय लेने में मदद मिलती हो। जीवन के किसी एक या अनेक पहलुओं को जानने एवं समझने में मदद मिलती हो।

संवाद करने के बहुत से तौर-तरीके हो सकते हैं और इस के अन्तर्गत अनेक समस्याओं

के हल ढूँढ़ने की कोशिश हो सकती है। मैंने इस लेख में कोशिश की है कि कुछ मूलभूत और मूर्त स्तर पर चीज़ों को साझा करूँ, समझूँ। मेरा मानना है कि सुकरात के समय से आज तक पिछले दो-ढाई हजार सालों में संवाद के मूलभूत ढाँचे में कोई खास फर्क नहीं आया है-तार्किक प्रश्न उठाना, उस के कुछ पुख्ता उत्तर देना, पुनः अपने उत्तर में कुछ तार्किक खामी ढूँढ़ना और फिर दुबारा परिष्कृत रूप प्रस्तुत करना। ये यूँ ही लगातार चलते रहने वाली प्रक्रिया है। सुकरात जितने महत्वपूर्ण आज से ढाई हजार साल पहले थे संवाद के सन्दर्भ में मुझे लगता है कि वो आज भी उतने ही प्रासंगिक हैं। सुकरात का मानना यह था कि शिक्षक की ज़िम्मेदारी केवल कुछ विषय सिखा या रटा देना भर नहीं है। बल्कि यह सिखाना भी है कि उन विषयों में सोचते कैसे हैं, सिद्धान्त कैसे गढ़ते हैं, नया ज्ञान कैसे बनाते हैं? उदाहरण के लिए विज्ञान, समाज विज्ञान, गणित आदि में नए ज्ञान का सृजन कैसे होता है?

उन का मानना था कि दरअसल यह सब सीखने के लिए एक आधारभूत प्रक्रिया है, वो है संवाद करना। छात्रों से तर्क-वितर्क करना, उन से उन की राय, विचार और परिभाषाएँ पूछना, फिर उन में तार्किक गलतियाँ/खामियाँ दिखाना, उन को परिष्कृत करवाना ये संवाद की मूलभूत प्रक्रियाएँ हैं। इन प्रक्रियाओं से गुजरते हुए ही छात्र-छात्राएँ ये सीख पाते हैं कि उन्हें किस प्रकार चिन्तन-मनन करना चाहिए।

सुकरात के लिए ऐलेन्कस उन की प्रिय युक्ति थी। इस युक्ति के माध्यम से सामने वाले की बात को खारिज़ किया जाता है। आखिर खारिज़ करते क्यों हैं? सुकरात इस युक्ति का इस्तेमाल अपोरिया की स्थिति प्राप्त करने के लिए करते थे। अपोरिया एक ऐसी स्थिति है जहाँ सामने वाले व्यक्ति को उस की बात / तर्क में विसंगतियाँ या दोष दिखाया जाता है। वह अपने दोष या विसंगतियों को साफ-साफ देख पाता है। ऐसी स्थिति को अपोरिया कहते हैं।

मूलभूत तत्व जो हमें सुकरात की संवाद प्रक्रिया में दिखते हैं वो कुछ इस प्रकार हैं–

1. पहले दोनों पक्षों को यह तय करना होता है कि मुद्दा क्या है जिस पर हम बात करने वाले हैं। फिर उस पर दोनों पक्षों की क्या राय है यह साफ-साफ बताया जाना। उदाहरण के लिए उन की मान्यताएँ, परिभाषा या तर्क क्या हैं आदि।
2. दूसरे चरण में कोई एक पक्ष दूसरे पक्ष की मान्यताओं में विसंगतियों को दिखाता हैं ताकि अपोरिया की स्थिति पैदा हो सके।
3. तीसरे चरण में इन विसंगतियों को कैसे दूर करें यह सोचा जाता है और क्या ज़्यादा परिष्कृत मान्यताएँ हो सकती हैं इस पर विचार किया जाता है।

मुझे लगता है कि कुछ इस प्रकार की प्रक्रियाएँ मेरे और बच्चों के बीच चल रही थीं। इसलिए ही मैं कक्षा-कक्ष में संवाद की संस्कृति को बढ़ावा देने की बात उठा रहा हूँ। यदि शिक्षक व बच्चों के बीच संवाद की संस्कृति बनती है तो न सिर्फ बच्चों के सीखने की गति बढ़ेगी बल्कि वो यह भी सीखने की ओर अग्रसर होंगे कि सही समझ बनाने के लिए सवाल उठाना, तर्क करना और दूसरों की बात सुनना कितना ज़रूरी होता है।

मेरे मन में उठते सवाल

"राष्ट्रीय पाठ्यचर्या 2005 का दस्तावेज अध्यापकों की भूमिका देखता है कि वह बच्चों को अभिव्यक्ति के लिए एक सुरक्षित स्थान व अवसर दें और साथ ही निश्चित प्रकार की अन्तःक्रिया (संवाद) स्थापित करें। उन्हें नैतिक सत्ता की परम्परागत भूमिका से बाहर निकलने और बिना निर्णयात्मक हुए समानुभूति के साथ कैसे सुनना होता है सीखना होगा। बच्चों को एक-दूसरे को सुनने में सक्षम बनाना होगा।

शिक्षार्थियों की समझ को समेकित कर, रचनात्मक रूप से उस समझ की सीमाएँ बढ़ाते हुए इस बात के प्रति सचेत भी करना होगा कि मतभेद या अन्तर किस प्रकार व्यक्त किए जा सकते हैं। परस्पर विश्वास का वातावरण कक्षा

को बच्चों के लिए एक ऐसा सुरक्षित स्थान बना देगा जहाँ वे अनुभव बाँट सकें, जहाँ विवादों को स्वीकार कर उन पर रचनात्मक प्रश्न उठाए जा सकें और जहाँ विवादों के हल परस्पर सहमति से निकाले जा सकें, चाहे ये हल कितने ही अस्थायी क्यों न हों। विषेशकर लड़कियों व वंचित सामाजिक वर्ग से आए बच्चों के लिए कक्षा व स्कूल ऐसे स्थान होने चाहिए जहाँ वे निर्णय लेने की प्रक्रिया पर चर्चा कर सकें, अपने निर्णय के आधार पर प्रश्न उठा सकें एवं सोच-समझकर विकल्प चुन सकें।" (एनसीएफ 2005 पेज, 28)

राष्ट्रीय पाठ्यचर्या 2005 के दस्तावेज में अध्यापकों से अपेक्षा के सन्दर्भ में बच्चों के साथ हुए इस संवाद से मेरे सामने कई प्रश्न उभरकर आए हैं। मुझे लगता है कि बतौर शिक्षक इन सवालों की तरफ भी सोचना बहुत ज़रूरी है। मैंने पाया है कि अक्सर शिक्षक बच्चों के व्यवहारिक ज्ञान को नज़रअन्दाज़ करके पुस्तकीय जानकारी पर ही केन्द्रित रह जाते हैं। बच्चे बहुत से मुद्दों पर गलत या अधूरी सी अवधारणा अपने साथ लेकर स्कूल आते हैं यदि उन्हें जाने बिना एक शिक्षक उन्हीं मुद्दों पर नई अवधारणा बच्चों को देने का प्रयास करेगा तो क्या ये बच्चों के सीखने को प्रभावित नहीं करेगा?

इस तरह के सवालों में हम पर्यावरण की शिक्षा से विज्ञान शिक्षा की ओर बढ़ने के स्पष्ट अवसर खोज सकते हैं। एक और सवाल उभरकर आया कि अक्सर स्कूल की तरफ से अभिभावकों पर ज़िम्मेदारी डाल दी जाती है। यह सही है कि अभिभावकों को भी अपने बच्चों के सीखने की प्रक्रिया में भूमिका अदा करना चाहिए या कम से कम इस तरफ जागरूक तो रहना ही चाहिए। लेकिन हमारे देश में बहुत से बच्चे अभी पहली पीढ़ी के हैं जिन्हें स्कूल जाने का मौका मिल पा रहा है।

इस स्कूल में भी ज़्यादातर बच्चे मज़दूर परिवारों से आ रहे हैं। निर्माण कार्य से जुड़े परिवारों के बच्चों से यह कहा जाना कि इन सवालों के बारे में अपने परिवार से जानकारी लेकर आओ कितना उचित है? एक और बात जिसे मैंने महसूस किया वह थी शिक्षक और बच्चों के बीच होने वाले संवाद का महत्त्व। आखिर हमारे स्कूलों में बच्चों को कक्षा में आपसी संवाद या शिक्षक के साथ संवाद का अवसर क्यों नहीं दिया जाता? हमने देखा है कि आपसी संवाद से बच्चों में स्वतंत्र अभिव्यक्ति एवं तर्क करने की क्षमता का विकास होता है। संवाद ही है जो हमें अपने अनुभवों के अलावा भी बहुत सी बातों पर चर्चा कर समझ बनाने का अवसर देता है। स्कूली संवाद बच्चों को ऐसे मौके भी दे सकता है कि वे घर के अनुभवों और वहाँ पैदा हुई चिन्ताओं के बारे में बात कर पाएँ। संवाद निःसन्देह स्पष्टता लाता है लेकिन छोटी कक्षाओं में संवाद की भी एक सीमा होती है इसलिए एक शिक्षक को शिक्षण के दौरान कुछ दूसरी चीज़ें भी अपने साथ लानी चाहिए मसलन– पाठ्यपुस्तक, चित्र, फिल्म, भ्रमण के अनुभव एवं स्लाइड शो आदि।

सन्दर्भ

स्कूल में कक्षागत अवलोकन

सीखना और ज्ञान, एनसीएफ 2005, पेज 28

Rebecca Bensen Cain, *The Socratic Method: Plato's Use of Philosophical Drama*, 2007 (Continuum International Publishing Group, London)

Secrets of the Earth- Rain, Hindi Documentary, link https:// youtu.be/85qZa53_SUZ

महमूद खान पिछले दो दशक से शिक्षा के क्षेत्र में अध्यापन एवं प्रशिक्षण कार्य में सक्रिय रहे हैं। वर्तमान में अज़ीम प्रेमजी फाउण्डेशन जयपुर में बतौर सामाजिक विज्ञान रिसोर्स पर्सन कार्यरत हैं।

सम्पर्क : mahmood.khan@azimpremjifoundation.org